पक्षी-परिचय पर आधारित एक विलक्षण औपन्यासिक कृति: तीन खण्डों में

"बनफूल" रचित

डाना

(तृतीय खण्ड)

हिन्दी अनुवाद

जयदीप शेखर

डाना

(तृतीय खण्ड)

पक्षी-परिचय पर आधारित एक विलक्षण औपन्यासिक कृति (3 खण्डों में)

मूल बँगला लेखक

“बनफूल”

हिन्दी अनुवाद

जयदीप शेखर

JAGPRABHA.IN

Bird Photos Credit

Photos of Birds used in the **Annexure- 3A** of this book are taken from-

Nature Web: Photos are marked with 'NW'

(contributors: Parag Kokane and Amol Kokane)

Wikimedia: Photos are marked with 'WM'

Subbalakshmi Shastry: Photo of Yellow Wagtail (Yellow-headed) (Photograph #204)

Translator pays his heartiest gratitude and thanks towards the Photographers and the webpage admins.

-:eBook:-

Dana (Tritiya Khand): The Wings (Volume- III)

Hindi translation of a unique Bengali novel based on Bird-Watching published in 3 parts consicutively in the years 1948, 1950 and 1955.

Original Author: "Banaphool" (1899-1979)

(Balai Chand Mukhopadhyay)

Hindi Translator: Jaydeep Das

(Pen Name- Jaydeep Shekhar)

Cover Sketch: Translator

Copyright 2021 © Translator

All rights reserved

Available at: jagprabha.in

***

अनुक्रमणिका

अनुक्रमणिका 4
डाना (तृतीय खण्ड) 5
अध्याय- 1 6
अध्याय- 2 18
अध्याय- 3 34
अध्याय- 4 36
अध्याय- 5 47
अध्याय- 6 54
अध्याय- 7 59
अध्याय- 8 68
अध्याय- 9 83
अध्याय- 10 93
अध्याय- 11 105
अध्याय- 12 114
अध्याय- 13 136
अध्याय- 14 142
अध्याय- 15 151
अध्याय- 16 153
अध्याय- 17 155
अध्याय- 18 162
अध्याय- 19 166
अध्याय- 20 179
अध्याय- 21 184
अध्याय- 22 185
पुनर्समापन 190
परिशिष्ट- 3A: उपन्यास में वर्णित चिड़ियों के छायाचित्र 200
परिशिष्ट- 3B: उपन्यास में वर्णित चिड़ियों की सूची 203

डाना
(तृतीय खण्ड)

अध्याय- 1

वैशाख की दोपहर। कवि को लग रहा था जैसे मध्यरात्रि हो, रहस्यमयी मध्यरात्रि। निशीथ-गगन की असंख्य नक्षत्रमालाओं ने ही मानो किसी मंत्रबल से एकत्रित होकर सूर्य का रूप धारण कर लिया हो। उनकी खिड़की से धूप में चमकता जो दृश्य दिखायी पड़ रहा था, वह मानो वास्तविक नहीं, किसी परिलोक का हो। हालाँकि बचपन से बहुतों बार इस दृश्य को वे देख चुके थे, फिर भी वे यकीन ही नहीं कर पा रहे थे कि उनके अतीत जीवन के साथ इसका कोई सम्बन्ध है। कनेर, पलाश, कृष्णचूड़ा के उद्दाम, किन्तु नीरव वर्ण-समारोह के बीच शाऊबीगी का जो तीक्ष्ण, करूण सुर बीच-बीच में ध्वनित हो रहा था, वह इस लोक का है- इसे वे मान ही नहीं पा रहे थे। उन्हें लग रहा था, मानो आज उन्होंने सहसा किसी परम मुहूर्त में परम सत्य को पा लिया है- यह सत्य न केवल अपरूप, बल्कि अवर्णनीय भी है। भाषा में इसे व्यक्त करने करने की कोशिश में हिचक रहे थे वे। लग रहा था, अन्तरलोक में अनुभूत इस अपरूप लीला को छन्दों में बाँधने से उसकी अलौकिकता खो जायेगी। मन में फिर भी छन्द जन्म ले रहे थे, कविता के तुक गुंजन कर रहे थे। शाऊबीगी चिड़िया अपने सूक्ष्म, तीक्ष्ण, सुन्दर सुर में 'फटि- क- जल' बोलते हुए मानो उनसे कह रही थी- 'तुम चुप क्यों बैठे हो, तुम भी अपना गान गाओ न! तुम्हारे मन में यदि सुर है, तो उसका कुछ तो तुम्हारे कण्ठ से फूटेगा। सारे सुर न ही फूटे! इसके अलावे, मन के सारे ही सुरों को तुम गा लोगे- यह अहंकार ही क्यों रखना है? स्वयं सृष्टिकर्ता भी क्या अपने अन्तर के सारे सुरों को गा पाते हैं एक साथ?'

चिड़िये के सुर से तिरस्कृत होकर कवि लज्जित हुए। कविता की कॉपी निकाल कर कुछ पल चुपचाप बैठे रहे वे। इसके बाद लिखा-

धूप नहीं, धूप नहीं, सोने का स्वच्छ मेघ
उतर आया है धरती पर
उसी के आकर्षण में, उसी को देख पाया सुर ने वेग
पुलकित विहग के स्वर में
(कुल 14 पंक्तियों की कविता)

कविता लिखने के बाद कवि को वास्तव में महसूस होने लगा कि बाहर जो प्रचण्ड धूप दिशाओं को तपा रही है, वह धूप नहीं है, वह सोने का स्वच्छ मेघ है, जिस मेघ से उतरता है वर्षाजल।

(शाऊबीगी चिड़िया का बँगला नाम 'फटिकजल' है, जिसका अर्थ वर्षाजल होता है।)

दरवाजा खोलकर निकल पड़े वे। उन्हें लगा, इस अनवद्य अपरूप प्रकाश की अभ्यर्थना करना उन्हीं का दायित्व है, क्योंकि वे कवि हैं। साधारण आदमी दरवाजे की कुण्डी चढ़ाकर वैशाख के इस तेज प्रकाश की उपेक्षा कर सकता है, लेकिन वे क्या ऐसा कर सकते हैं? निकल पड़े वे। निकलने पर पहली नजर में यही लगा कि कहीं कोई नहीं है, चारों तरफ सुनसान है। वे मानो अकस्मात् परीकथा के किसी महल में प्रवेश कर गये हों। प्रखर रौद्रालोकित महल। आपादमस्तक स्वर्णालंकारों से ढका हुआ- वह क्या कनेर का वृक्ष है? अप्सरा क्यों नहीं हो सकती? वह जो दूर में रक्तशिखा-सी नजर आ रही है, वह पलाश है, न सेमल, या कि धरणी की मर्मभेदी कामना? कवि चुपचाप खड़े हो गये। तप्त हवा का एक झोंका कहीं से भागा आया और उनके चारों तरफ नृत्य करने लगा।

'फटि- क- जल, फटि- क- जल- '

कवि की तन्द्रा टूटी। कहाँ से पुकार रही है यह चिड़िया? जरूर दूर उस बड़े-से पेड़ से। किसी ऊँची डाली पर घनी पत्तियों की ओट में छुपी बैठी होगी। कुछ रोज पहले देखा था उन्होंने उस चिड़िया को। बहुत पापड़ बेलने के बाद देख पाये थे उसे। छोटी-सी चिड़िया, देखने में सुन्दर। नर चिड़े की देह पर काले, सफेद और हरापन लिये पीले का अद्भुत समन्वय था, संगिनी की देह पर लेकिन कालेपन की छाया तक नहीं थी। नर चिड़े को देखकर लगा था, जैसे उसके अंगों पर अमावस्या की कालिमा के साथ सूर्यालोक की स्वर्णकान्ति का द्वन्द चल रहा हो; लग रहा था, नर तामसिकता की कालिमा को नहीं जीत पाया हो, संगिनी ऐसा कर पायी थी, उसके अंग-प्रत्यंगों पर केवल हरे और पीले की द्युति थी, काले का आभास मात्र भी नहीं था।

'फटि- क- जल, फटि- क- जल- '

कवि ने फिर घर में प्रवेश किया। कुछ दिनों पहले शाऊबीगी पर एक कविता लिखी थी उन्होंने। उन्हें एकाएक महसूस हुआ, अभी एक बार उस कविता को पढ़े जाने की जरुरत है। अन्दर आने के बाद लेकिन वे कविता वाली बात भूल

गये। एक असंलग्न बात दिमाग में आ गयी कि अमरेशबाबू की जमीन्दारी के अन्दर कहीं खून हो गया था एक। जमीन्दार के मैनेजर होने के नाते उन्हें शायद थाना जाना पड़े। एक गुमश्ता को उन्होंने जाने के लिए कह रखा था, लेकिन वह यदि लौटकर बताये कि उन्हीं को जाना पड़ेगा, तब तो- । उलझन महसूस करने लगे वे। अमरेशबाबू की पत्नी किस धर्मसंकट में डाल गयीं उन्हें? साथ-ही-साथ डाना की भी याद आयी। सिर्फ उन्हें ही नहीं, डाना को भी संकट में डाल गये हैं वे। मानो, दोनों को दो तरह का 'टास्क' देकर गये हों। इस विषण्ण भाव के बावजूद वे मन-ही-मन थोड़ा आनन्दित भी हुए। डाना और वे स्वयं इस कारागार में कैदी बने हैं सिर्फ अर्थाभाव के कारण- यह धारणा मन में स्पष्ट होने के बाद डाना के सम्बन्ध में एक नयी किस्म की आत्मीयता-बोध मन में जागी। लेकिन इसमें आनन्दित होना अनुचित है- यह भी भान हुआ उन्हें साथ-ही-साथ। थोड़े लज्जित हुए वे।

'फटि- क- जल- '

कविता की कॉपी खोलकर दोषी भाव के साथ वे पन्ने पलटने लगे, मानो कर्तव्य की अवहेलना करते हुए पकड़े गये हों। कविता में काट-कूट बहुत थी, फिर भी उन्हें पढ़ने में दिक्कत नहीं हुई-

वैशाखी दोपहर के प्रचण्ड प्रकाश में
हरिताभ पीले में सफेद और काले में
सजकर आया कौन अनजानी दिशा से
फटिकजल का गान बार-बार गाते हुए
(कुल 10 पंक्तियों की कविता)

फिर निकल पड़े वे। दूर एक विशाल वृक्ष की छाया में कुछ गायें बैठी हुई थीं अर्द्धनिमीलित नयनों के साथ पगुराते हुए। एक नन्हा-सा बछड़ा केवल पूँछ उठाकर चारों तरफ उछल-कूद मचा रहा था। क्या उनकी सुन्दरी भी है उनमें? जानने के लिए वे यंत्रचालित भाव से उस ओर बढ़ गये, लेकिन गायों के निकट पहुँच कर जिसने उनका ध्यान खींचा, वह गायें नहीं, बल्कि पेड़ पर महालत चिड़ियों का एक झुण्ड था। उनमें से दो चिड़ियाँ हिलते हुए गजब के मीठे स्वर में गा रही थीं। क्या 'खुकू नेई' बोल रही हैं? या 'कू-अक-रिंग', या फिर, 'बोबो-लिन्'? सहसा कवि को महसूस हुआ, वे आपस में 'धर दिकिन, धर दिकिन' (पकड़ जरा) बोल रही हैं, जैसे कि बच्चे दौड़-भाग वाले खेल खेलते समय आपस में बोलते हैं। देखने में भी तो नटखट किशोरियों-जैसी ही थीं वे। सारी दोपहर

इस पेड़ से उस पेड़ पर उधम मचाती रहती हैं, कभी डाल-डाल, तो कभी पात-पात। कभी फल चुराती हैं, कभी दूसरी चिड़ियों के अण्डे चुराती हैं, कभी कीड़े-मकोड़े चट कर जाती हैं और फिर फुनगियों पर बैठकर हिल-हिल कर शोर मचाती हैं- 'धर दिकिन, धर दिकिन।' कवि का मन स्नेह के रस से भींग गया। विभूतिभूषण बनर्जी के 'पथेर पाँचाली' की दुर्गा हो जैसे। अगले ही पल एक कोयल की पुकार सुनायी पड़ी। इसके बाद सुनायी पड़ी- 'फटि- क- जल- '। थोड़ी दूरी पर स्वर्णालंकारभूषिता कर्णिका की विथियों से जो वर्ण-वाणी प्रस्फुटित हो रही थी, उसके प्रभाव से कृष्णचूड़ा के पुष्पगुच्छ मानो उन्मत्त हो उठे थे। फूल मानों रंगों की भाषा में परस्पर को पुकार रहे थे। कवि को फिर महसूस हुआ कि वे परीलोक में प्रवेश कर गये हैं। काफी देर तक स्तब्ध खड़े रहे वे। आश्वस्त एवं आनन्दित भाव के साथ खड़े थे वे। लगा, लम्बे प्रवास के बाद अचानक वापस लौट आये हों। चिड़ियों का यह कलरव, फूलों की भाषा, रौद्रमण्डित निस्तब्ध द्विप्रहर में वृक्ष, तृण, लता-गुल्मों की सहस्र भंगिमाओं में असंख्य आवेदन- यही तो उनका निजस्व परिवेश है। इन्हीं की क्रोड़ में, इन्हीं वैचित्र्य के पालने में, इसी सहज सुन्दर प्राकृतिक वातावरण में ही तो वे पले-बढ़े हैं। कितने ही जन्म-जन्मान्तरों से, कितने ही सुख-दुःख, आशा-आकांक्षा, आनन्द-वेदना के कितने ही संघात से आन्दोलित किया है उन्हें इसी प्रकृति की गोद ने। मायाविनी सभ्यता के पीछे-पीछे कहाँ मारे-मारे फिर रहे थे वे अब तक अपना घर छोड़कर? किसके मोह में वे अब तक जटिल और अस्वाभाविक जीवन-यापन कर रहे थे? अपनी बुद्धि का अनुसरण करते हुए कहाँ जा रहा है मनुष्य! क्या है इसकी परिणति!

अचानक गर्म हवा का एक झोंका उनके चारों तरफ नाचकर, सूखे पत्तों और धूल का छोटा-सा गुबार उड़ाकर बूढ़े बरगद की ओर भागा उसके पत्र-पल्लवों को झकझोरते हुए। कवि मुग्ध भाव से खड़े रहे। बचपन का कोई दोस्त मानो पीछे से धौल जमाकर भाग खड़ा हुआ हो। वह तो अभी भी वैसा ही बदमाश, वैसा ही चंचल, वैसा ही जोशीला, वैसा ही बेपरवाह है। क्या वे स्वयं बूढ़े हो गये हैं? इस पर ध्यान जाते ही उनका समस्त अन्तःकरण प्रतिवाद कर उठा। शरीर भले थोड़ा सुस्त पड़ा है, मन तो अभी बूढ़ा नहीं हुआ है। उनके मन में आने लगा, क्यों न इन पागल हवाओं के साथ एक दौड़ लगायी जाय? थोड़ा-सा दौड़ लेने से क्या हो जायेगा? बहुत हुआ, तो थोड़ा दम फूलेगा। कोई देख ले, तो हँसेगा, पागल समझेगा। इससे क्या फर्क पड़ता है! पूँछ उठाये हुए बछड़ा एक दौड़ लगाकर

उनके सामने आकर ठहर गया। मानो, वह कह रहा हो- 'दौड़ोगे? अच्छी बात है, चलो।'

कवि वास्तव में दौड़ लगाने जा रहे थे, लेकिन नहीं सके। रास्ते की मोड़ पर पोस्टमैन को देखकर उनकी गति ठहर गयी, कल्पना के पैरों में बेड़ियाँ पड़ गयीं। सहज मन्द गति से वे पोस्टमैन की ओर बढ़े। पोस्टमैन भी उन्हीं की ओर आ रहा था, उनके नाम चिट्ठी थी एक। खासा मोटा एक लिफाफ उनके हाथों में थमाकर पोस्टमैन अपने रास्ते चला गया। पता देखकर ही कवि समझ गये कि अमरेशबाबू की चिट्ठी थी। हाथ की लिखावट में ही उनका चरित्र स्पष्ट हो जा रहा था। भरे-पूरे, मोटे और बलिष्ठ अक्षर। लिफाफ मोटा था। लिफाफ फाड़ते ही कवि को महसूस हुआ, यह चिट्ठी यहाँ खड़े-खड़े पढ़ना सम्भव नहीं है। लम्बी चिट्ठी थी। शुरू में ही नजर पड़ी- 'दहियर के एक जोड़े ने हमारे भण्डारघर की दीवार की दरार में घोंसला बनाया है- जानकर बहुत खुशी हुई। सुश्री डाना के पास मैंने और भी कुछ किताबें भेजवायी हैं। उनमें दहियर से सम्बन्धित कुछ जानकारियाँ मिल जायेंगी उन्हें। दहियर के सम्बन्ध में जो भी बातें मेरे ध्यान में हैं, वो मैं आपको बता रहा हूँ। दहियर की चहचहाहट तो खूब सुन ही रहे होंगे वहाँ। यहाँ भी दहियर मस्त हो रही हैं- ' इतना ही पढ़कर कवि को लगा, इस चिट्ठी को डाना के पास लेकर जाना ही उचित होगा। अवचेतन मन की जो गोपन इच्छा थी अब तक, उसे अब कर्तव्य जानकर वे द्विधामुक्त हुए। चिट्ठी हाथ में लेकर इस भरी दुपहरिया में बागान के रास्ते डाना के डेरे की ओर वे चल पड़े। भले बाहर से वे स्वयं को सहज रखने की कोशिश कर रहे थे, पर अन्तर में वे भाव-विह्नल हुए जा रहे थे। परीकथा का जो काल्पनिक लोक थोड़ी देर पहले उनके सामने वास्तविक हो उठा था, उसका प्रभाव अभी तक मिटा नहीं था। उन्हें लग रहा था, वे परीकथा के एक राजकुमार हैं और वे परीकथा की राजकुमारी से मिलने के लिए बियाबान जंगलों से होकर गुजर रहे हैं। जो मेघ वर्षा करता है, उसने उनके लिए स्वर्णालोकित प्रकाश फैला रखा है चहुँओर। उनकी उम्र बहुत कम हो गयी है, उनकी कविताओं ने मूर्त रूप धारण कर लिया है...

कल्पना के पंखों पर सवार होकर जब वे सब्जीबाग स्थित उस खण्डहरनुमा मकान के पास पहुँचे, तब तक उनकी खुमारी उतरी नहीं थी। कुण्डी चढ़े दरवाजे की ओर तकते हुए कुछ देर निस्पन्द खड़े रहे वे। नौकर की आहट से वे चौंके।

"माईजी निकली हुई हैं।"

खुमारी उतर गयी, लेकिन आवाज नहीं निकली।

"आप बैठिएगा क्या?" नौकर ने ही फिर प्रश्न किया।

"हाँ, काम था जरा। कहाँ गयी हैं माईजी?"

गले से आवाज निकलने के बाद सामान्य हुए वे, मानो परीलोक से धरती पर लौट आये हों।

"वो तो नहीं पता। माईजी ने मुझे डाकघर भेजा था खाम-पोस्टकार्ड लाने। आकर देखा, वे कहीं निकल गयी हैं। आस-पास ही कहीं गयी होंगी। आप बैठिएगा, तो बैठिए। अभी आ जायेंगी।"

दरवाजा खोल दिया उसने। कवि अन्दर जाकर बैठे। सबसे पहले नजर पड़ी, टेबल पर रखी तीन मोटी-मोटी पक्षी-विषयक किताबों पर। जरूर अमरेशबाबू की भेजी हुई किताबें होंगी ये। कवि को एक विचित्र अनुभूति हुई। लगा, अमरेशबाबू ने सिर्फ चिड़ियों को ही पिंजड़ों में कैद नहीं किया है, बल्कि डाना को भी कैद कर रखा है। क्या पता, किसी अदृश्य यंत्र से वे उन लोगों के भी नाखून, पंख, चोंच माप रहे हों!

अमरेशबाबू के बारे में सोचते हुए कवि अन्यमनस्क हो गये। उन्हें लगने लगा, इन सज्जन को पर्याप्त सम्मान नहीं दिया है उन्होंने। कभी अवज्ञा के साथ, तो कभी अनुकम्पा करके उन्हें बर्दाश्त ही किया है अब तक, उनके ज्ञान एवं गुणों के आधार पर उनका मूल्यांकन करने की कभी कोशिश ही नहीं की है उन्होंने। कवि को लगा, अगर उन्होंने ऐसा किया होता, तो कितने अभिभूत होते वे! असुर के समान बलिष्ठ, शिशु के समान कौतूहली, ऋषि के समान ज्ञानवान, राजा के समान धनी, अग्नि के समान पवित्र इन सज्जन की अनन्यता पर उन्हें कम-से-कम मुग्ध होना चाहिए था। वे कवि हैं। साथ-ही-साथ एक दूसरी बात ध्यान में आते ही वे असहज हो गये। मन-ही-मन मुग्ध ही हुए हैं वे, पर बाहर प्रदर्शन किया है ठीक उल्टा। क्या जरुरत थी इस चतुराई की? आत्मसम्मान के मुखौटे को कायम रखने के लिए? अचानक चिट्ठी की याद आयी उन्हें। जेब से निकाल कर वे पढ़ने लगे-

'प्रिय आनन्दमोहनबाबू,

दहियर के एक जोड़े ने हमारे भण्डारघर की दीवार की दरार में घोंसला बनाया है- जानकर बहुत खुशी हुई। सुश्री डाना के पास मैंने और भी कुछ किताबें भेजवायी हैं। उनमें दहियर से सम्बन्धित कुछ जानकारियाँ मिल जायेंगी उन्हें। दहियर के सम्बन्ध में जो भी बातें मेरे ध्यान में हैं, वो मैं आपको बता रहा हूँ। दहियर की चहचहाहट तो खूब सुन ही रहे होंगे वहाँ। यहाँ भी दहियर

चिड़ियाँ मस्त हो रही हैं। हम लोगों के रेडियो का एरियल यहाँ के एक दहियर-गायक का प्रधान रंगमंच बन गया है। उस पर बैठकर कितने ही गीत गाता है वह! सम्भवतः अपनी प्रेयसी को ही सुनाता है, पर बीच में हम लाभवान हो जाते हैं। क्या कहना है आपका? एक अँग्रेज लेखक डी. एच. लॉरेन्स ने अपने एक लेख में लिखा है कि पक्षी अपनी प्रेयसी को लुभाने के लिए गीत नहीं गाते, मोर मोरनी का मुग्ध करने के लिए पंख उठाकर नृत्य नहीं करते! वे जो भी करते हैं, सब अकारण पुलक के कारण करते हैं। वे सज्जन कार्यकारण के सिद्धान्त को नहीं मानना चाहते। ऐसा नहीं है कि पक्षी अकारण पुलक के कारण गीत नहीं गाते, ध्यान से देखिएगा, बहुत बार यह दहियर ही अकारण खुशी के गीत गाता रहता है! लेकिन उसके ज्यादातर गीतों का उद्देश्य उसकी प्रिया होती है- इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। लॉरेन्स का कहना है कि सौन्दर्य एक रहस्यजनक मामला है। उसका कोई कारण नहीं होता। विज्ञान जबर्दस्ती एक कारण खोज निकालने की कोशिश करता है, क्योंकि वैज्ञानिकों में कारण खोजने की बीमारी होती है। ऐसा होता है- मैं मानता हूँ, लेकिन लॉरेन्स उसी लेख में कहते हैं कि जीवन्त यौवन ही सौन्दर्य है। अर्थात् वे स्वयं भी रूप के प्रकाश को यौन-अभिव्यक्ति से जोड़ने से नहीं बच पाये। विज्ञान को गरियाते हुए वे अनजाने में ही वैज्ञानिकों की बात को दुहरा बैठे हैं। खैर, जाने दीजिए इन बातों को, फिलहाल दहियर की बातें सुनिए।

पंजाब के कुछ हिस्सों, राजपुताना, सिन्धु और कच्छ इलाकों को छोड़कर भारत के प्रायः सभी इलाकों में दहियरों का स्थायी वास होता है। पर्वतीय इलाकों में भी है; चार हजार फीट, कभी-कभी पाँच हजार फीट की ऊँचाई तक इन्हें देखा जाता है। हिमालय पर भी एक हजार फीट तक इनके घोंसले और अण्डे पाये गये हैं। इनके चाल-चलन पर गौर किया है आपने? बेशक किया होगा। दहियर पर जब इतनी सुन्दर कविता आपने लिखी है, तो जरूर आपने अच्छे से निरीक्षण किया होगा, या फिर कह नहीं सकता, बिना देखे भी तो आप लोग अच्छी कविता लिख सकते हैं- इसके तो अनगिनत प्रमाण विश्वसाहित्य में है। रवीन्द्रनाथ ने 'उर्वशी' को, या शेक्सपीयर ने 'मिडसमर नाईट्स ड्रीम' तो नहीं ही देखा होगा। खैर, फिर मैं बेकार की बातों से आपका समय नष्ट करने लगा। दहियर की बात हो रही थी, वही चले। एक अँग्रेजी लेखक के शब्दों में दहियर है- A bird of groves and delight to move about on the ground in the mixed chequer of sunshine and shade.- इसे संक्षिप्त हिन्दी में कुछ

यूँ कहा जा सकता है कि हमारी दहियर चिड़ियाँ कुंजबिहारी हैं (निकुंजबिहारी कहने में भी हर्ज नहीं), जो जंगलों की छाया व प्रकाश की झिलमिलाहट में विचरण करना पसन्द करती हैं। एक विदेशी लेखक का कहना है कि दहियर चिड़ियाँ घनी झाड़ियों के अन्दर विचरण करना पसन्द नहीं करतीं (thick undergrowth it dislikes); लेकिन दो-तीन बार मैंने इन्हें घनी झाड़ियों में देखा है। बेशक, शीतकाल में। उन दिनों ये बेचारी सुस्त रहा करती हैं। तब कण्ठ से इनके सुर भी ठीक से नहीं निकलते। इतना है कि छोटी-मोटी साथ-सुथरी जगह ही ये ज्यादा पसन्द करती हैं। हमारे घर की वह छोटी-सी जगह बहुत पसन्द है उन्हें- वहीं, जहाँ हम लोगों ने आईना लगवाया था- आपको याद ही होगा। यहाँ के बगीचे में भी एक दहियर चिड़िया रहती है, श्रीमतीजी के साथ उसकी तो खासी दोस्ती हो गयी है। पेड़ों के नीचे फुदकते हुए घूमती-फिरती है, फिर उड़कर किसी डाली पर या बगीचे की दीवार पर जा बैठती है और गर्दन घुमाकर निरीक्षण करती है। किसी पेड़ के नीचे किसी कीड़े-मकोड़े की हलचल पर नजर रखती है, हलचल दिखते ही साँय-से उड़कर आती है, कीड़े को चट करती है और फिर जाकर डाली या दीवार पर बैठ जाती है। फूल तोड़ते हुए श्रीमतीजी बहुत पास भी चली जाती हैं, फिर भी वह नहीं भागती। एक बार उसके हाव-भाव को देखकर लगा कि वह कह रही है- 'ओह, आप हैं! मैं भोजन संग्रह कर रही हूँ। आपके इन फूलों को जो कीड़े-मकोड़े नुकसान पहुँचाते हैं, उन्हें चट कर जाती हूँ!'- ऐसा सहज भाव था उसका। इसके बाद एकाएक उड़के जाकर एरियल पर बैठ गयी और गाना गाने लगी। ऐसा लगा, हमने उसे अपने बगीचे में रहने दिया है, इसके लिए वह कृतज्ञ है और गाना गाकर धन्यवाद जता रही है। दहियर के गीतों में कितनी मूर्छना, कितना उतार-चढ़ाव, कितना लालित्य, कितना वैचित्र्य होता है- यह तो आप रोज ही सुनते होंगे। कई दिनों तक अध्ययन करके मैंने यहाँ की दहियर चिड़िया के गाने को अपनी भाषा में लिपिबद्ध करने की कोशिश की थी। कुछ खास हासिल नहीं है, क्योंकि असली चीज तो गाने का सुर होता है और इसे लिपिबद्ध करना मेरे बस की बात नहीं है। इससे गाने के तरीके को थोड़ा-बहुत समझा जा सकता है। कुछ आपको भी भेज रहा हूँ-

ओ पी पी पी पी पी- चिह्...

(दो मिनट)

ओ जा- गो शिग्गिर शिग्गिर शिग्गिर

(साथ-ही-साथ उड़ गयी)

पिं- केरेः पिं- केरेः पिं- केरेः...

(पाँच मिनट)

पी पी पी- कोय तुमी- कोय तुमी- कोय तुमी- की की की

(तीन मिनट)

प्रि प्रि प्रि प्रि प्रि- या प्रि- या...

(दो मिनट)

पी ई ई ईः- पी ई ई ईः

(मिनट भर)

पी त्रिं त्रिं त्रिं त्रिं त्रिं- ची ची ची

(पुकारते हुए उड़ गयी)

कि जे- कि जे- कि जे- कि जे- कि ए कि ए कि ए- क्रिकिक् क्रिकिक्...

(मिनट भर)

पी पी पी- कि कोरछो जे- कि कोरछो जे- दुत्तोर- दुत्तोर

(प्रायः दो मिनट)

ए कि रेः- ए कि रेः- ए कि रेः- चोख गेलो- चोख गेलो...

(तीन मिनट)

(शिग्गिर- जल्दी, के रे- कौन रे, कोय तुमी- कहाँ तुम, कि जे- क्या जो, कि ए कि- क्या यह क्या, कि कोरछो जे- क्या जो कर रहे हो, दुत्तोर- धत्त तेरी, ए कि रे- यह क्या रे, चोख गेलो- आँख गयी)

इनके अलावे और भी कई तरह की पुकार हैं, जिन्हें हमारे अक्षरों में लिखना मुश्किल है। मेरी इच्छा है कि दहियर चिड़ियों के प्रेक्षण पर एक छोटी-सी किताब लिखूँ। डेविड लैक (David Lack) की 'दि लाईफ ऑफ दि रॉबिन' किताब देखी आपने? वहाँ मेरी शेल्फ में है, चाहें, तो देख सकते हैं। वैसी ही एक किताब लिखने की इच्छा है। हो पायेगा कि नहीं, पता नहीं। इस देश में बाधाएं बहुत हैं। एक बाधा है, जनसमागम। बहुत-से बेकार लोगों का वास है इस देश में, जिनका कोई भी काम नहीं है। यहाँ-वहाँ बैठकर गप्पें हाँकना ही एकमात्र काम होता है उनका। जब-तब बेधड़क चले आते हैं, न उन्हें भगाया जा सकता है, न दिल खोलकर उनका स्वागत किया जा सकता है। बेमौसम की बरसात या आँधी की तरह। महा-खिझाऊ। फिर भी थोड़ा-थोड़ा करके लिख रहा हूँ। डेविड लैक की उस किताब में एक बात है, सम्भव हो, तो मिलान करके देखिएगा- जो बात उन्होंने

रॉबिन रेडब्रेस्टेड के बारे में लिखी हैं, वह दहियर पर लागू होती हैं या नहीं! मुझे तो लगता है कि लागू होती हैं। वह बात है- चिड़ियाँ हर समय प्रिया को रिझाने के लिए ही गाती हैं- ऐसा नहीं है। डेविड लैक ने पाया कि किसी नर रॉबिन रेडब्रेस्टेड के इलाके में जब कोई दूसरा नर रॉबिन रेडब्रेस्टेड आ जाता है, तब आगन्तुक चिड़े को उद्देश्य कर यह वाला चिड़ा गानों का तूफान खड़ा कर देता है। अर्थात् झंकार के माध्यम से ही उसे हुंकार देता है। मनुष्य के साथ यहीं पर अन्तर है। हमारे इलाके पर जब कोई दूसरा अवांछित दावा ठोंकता है, तो हम उसके प्रति गाली-गलौज करते हैं, मुकदमा दायर कर देते हैं, लेकिन चिड़ा गाना ही गाता है। दूसरी ओर ट्रेसपासर चिड़ा इस गाने की मर्यादा की रक्षा भी करता है। ओह, यह आपका इलाका है, मैं समझ नहीं पाया था, सो सॉरी- संकुचित होकर कुछ ऐसा ही हाव-भाव जताकर वह चिड़ा हट जाता है। हालाँकि पक्षी-समाज में सभी इतने विनीत नहीं होते हैं, दो-एक को मार-पीट कर भी भगाना पड़ता है। आपके मन में प्रश्न उठ सकता है, इनके अपने इलाकों का मालिकाना कौन निर्धारित कर देता है? ये खुद ही तय करते हैं। किसी भी अनधिकृत इलाके पर जो पहले दखल जमा लेता है, वह इलाका उसी का हो जाता है- पक्षी-जगत में सबने इस नियम को स्वीकार कर लिया है। एकाधिक दहियर के पैरों में विभिन्न रंगों के रिंग पहना कर उनके दैनन्दिन जीवन के क्रिया-कलापों का आप लोग भी अध्ययन कर सकते हैं। दहियर के सम्बन्ध में और भी कुछ बातें बताकर मैं पत्र समाप्त कर रहा हूँ। दहियरों का प्रधान भोजन कीट-पतंगे होते हैं। उन्हें यदि पिंजड़े में रखना चाहें, तो चना, सत्तू या फल खिलाने से नहीं चलेगा- वे तोता-हिरामन की तरह वैष्णव प्रकृति के नहीं होते, वे स्वाभाविक रूप से शाक्त होते हैं। इसीलिए शायद उन्हें 'राधाकृष्ण' बोलना नहीं सिखाया जा सकता। इनकी प्रकृति में एक और बात गौर करने लायक है। ये कचबचिया चिड़ियों की तरह झुण्ड बनाकर नहीं रह सकते। यहाँ तक कि अपनी संगिनी के साथ भी इनका बहुत लगाव हो- ऐसा नहीं है। जब जरुरत होती है, तब प्रिया के लिए ये गीतों का झरना भले बहा दें, लेकिन उसके साथ चिपके रहने की प्रवृत्ति इनमें नहीं होती। मिजाज भी इनका तेज होता है, अँग्रेजी में जिसे pugnacious कहते हैं। कह सकते हैं, इनका चाल-चलन, इनका हाव-भाव सब आर्टिस्टों-जैसा होता है। ये व्यक्ति-स्वातंत्र्य के पक्षपाती होते हैं, किसी के भी साथ ज्यादा घुलना-मिलना पसन्द नहीं करते। फिन् साहब ने लिखा है कि अण्डमान द्वीपसमूह के रॉस आईलैझड में दहियरों के झुण्ड के झुण्ड नजर आते हैं, जो

मनुष्य को देखकर भागते नहीं हैं। बड़े दहियर को पिंजड़े में रखना मुश्किल है, पोस नहीं मानते ये, मर जाते हैं। इसका एक कारण शायद यह है कि जो कीट-पतंगे इनके खाद्य हैं, उनका इन्तजाम करना मुश्किल है। एक साहब ने हालाँकि दहियर के जोड़े को पिंजड़े में पोसा था, पिंजड़े में अण्डे देकर बच्चे का लालन-पालन भी किया था जोड़े ने- फिन् साहब ने लिखा है। उन लोगों की लिखी किताबें जब भी पढ़ता हूँ, एक बात बार-बार मन में आती है। प्रकृति के प्रत्येक आचरण की छोटी-छोटी बातों के प्रति भी उनके मन में कितनी अदम्य जिज्ञासा होती है! हमारे देश में कितने फूल, कितने पंछी, कितने प्रकार के वृक्ष पाये जाते हैं, किन्तु इनके बारे में किसी के मन में कोई जिज्ञासा ही नहीं होती। दो-चार चिड़ियों तथा वृक्षों के नाम बेशक बहुत-से लोग जानते हैं, लेकिन उनके ज्ञान के बाहर जो कुछ भी है, वह 'जंगली' या 'क्या पता' की श्रेणी में आते हैं। हमारे देश में तथाकथित शिक्षित लोग और भी अज्ञ होते हैं। थोड़ी-सी चेष्टा करके वे नाना प्रकार के विषयों का ज्ञान-लाभ कर सकते हैं, लेकिन यह चेष्टा वे नहीं करेंगे। नौकरी या व्यवसाय के अलावे जो काम करते हैं लोग, वह है- घटिया स्तर की परनिन्दा! सोचकर अफसोस होता है। आश्चर्य देखिये कि बातों-ही-बातों में मैं भी परनिन्दा में रम गया हूँ। यह शायद हमारे खून में ही होता है। पत्र बहुत लम्बा हो गया है, और आपका समय नष्ट नहीं करूँगा। चिड़ियों पर कौन-सी नयी कविता लिखी आपने? भेजिएगा। चिड़ियों को आकर्षित करने के लिए जो इन्तजाम आप लोगों ने किये हैं, उनसे कोई चिड़िया आकृष्ट हुई है या नहीं- यह बताने के लिए सुश्री डाना से कहिएगा। आशा करता हूँ, मेरे छोटे-से चिड़ियाघर की सभी चिड़ियाँ स्वस्थ होंगी। कोई अस्वस्थ दिखे, तो उसे छोड़ दीजिएगा। उल्लू कैसा है? उसे मांसाहार बहुत पसन्द होता है। माली को मैं चूहे पकड़ने के लिए बोल आया हूँ। चूहा अगर रोज न मिल पाय, तो बाजार से मांस का कीमा मँगवा दिया कीजिएगा। यहाँ के सारे मामले निपटा कर लौटने में मुझे देर हो जायेगी शायद। जमीन्दारी-सम्बन्धित कार्य निपटाने के लिए 'पावर ऑफ अटॉर्नी' मैं इसी पत्र के साथ भेज रहा हूँ। रत्नप्रभा इसी के साथ आपके लिए हजार रुपये का एक क्रॉस्ड चेक भेज रही हैं। वे कह रही हैं- यह पारिश्रमिक नहीं, प्रणामी है। सुश्री डाना का चेक कल या परसों भेजेंगी वे।

आप लोग हमलोगों का प्यार और नमस्कार स्वीकार करें। सभी खबरों के साथ उत्तर दीजिएगा।

इति-

आपलोगों का
अमरेश'

कवि चेक की ओर देखने लगे। सहसा एक विचित्र बात उनके मन में आयी। होठों पर मृदु मुस्कान खेल गयी। डाना के टेबल पर पत्र लिखने का जो पैड था, उसे लेकर उस पर लिखा उन्होंने-

कवि के तपस्या-लोक में आयी है अप्सरा
युग-युग में धरकर नाना रूप।
कभी मदिराक्षी बन लड़खड़ाती सुरापात्र लिये हाथ
यौवन-ज्वार से मदमाती आयी ज्योत्स्ना-नील रात्रि में
कभी चुपके से
आयी भक्तरूप में;
प्रशंसा के वाणी-रूप में कभी आयी वह
उच्छ्वसित रसिक वेश में;
जनता का रूप धरकर कभी किया अभिषेक
आदेश किया कभी, तो कभी वह 'चेक'।
बारम्बार उसके समक्ष पराभव किया स्वीकार
फिर भी मैं कवि निर्विकार
बन्दी बन रहता कारागार में होके शून्य-गति
फिर एक दिन उड़ जाता बनके मुक्त प्रजापति।
(बँगला में तितली को प्रजापति कहते हैं।)

कविता की ओर कुछ पल स्मितहास्य के साथ देखने के बाद कवि ने चेक को मनिबैग में डाल लिया।

अगले ही पल डाना कमरे में आयी।

"ओह, आप आये हैं। अच्छा हुआ। मैं आपके पास जाने की सोच ही रही थी। ताड़ के पेड़ पर हमने जो बक्सा लटकाया है, उसमें एक जोड़ा मैनों ने घोंसला बनाया है। ...यह क्या है, कविता लिखी है लगता है?"

कवि ने कविता पढ़कर सुना दी।

"अचानक यह भाव आया आपके मन में?"

"बस आ गया।"

"चलिए, मैनों का घोंसला दिखलाती हूँ।"

"चलो, लेकिन आकर चाय पीऊँगा एक।"

"ठीक है।"

दोनों निकल पड़े।

कवि ने काफी देर तक घूम-फिर कर घोंसले का निरीक्षण किया। सही में मैनों का एक जोड़ा चोंच में तिनके लेकर बक्से में आ रहा था फिर बाहर निकल रहा था।

"देखा आपने? मुझे तो बहुत मजा आ रहा है देखकर।"

"मुझे लेकिन अच्छा नहीं लग रहा।"

"क्यों?"

"नहीं जँच रहा। ऐसा लगता है, एक सन्थाल-दम्पत्ति को लाकर किसी ने कोलकाता के दुमंजिले फ्लैट में ठहरा दिया है। लग रहा है, यह एक फन्दा है, घोंसला नहीं।"

"आप भी क्या अजीबो-गरीब कल्पना करने लगते हैं। चलिए, चाय बना दूँ आपके लिए।"

डाना ने हँसी में यह बात कही थी, लेकिन यह बात जाने क्यों कवि को चुभ गयी।

"चलो फिर।"

दोनों फिर डेरे की ओर लौट पड़े।

डाना अनमनी-सी हो गयी।

अध्याय- 2

अगली सुबह सोकर उठते ही डाना को सबसे पहले मैनों के घोंसले की ही बात याद आयी। जल्दी से मुँह-हाथ धोकर वह ताड़ के पेड़ की ओर चल पड़ी। वहाँ पहुँचते ही जिस चीज पर उसकी नजर पड़ी, उससे वह चौंक गयी। घोंसले से साँप का एक केंचुल लटक रहा था। दोनों चिड़ियाँ कहाँ गयीं? इधर-उधर देखा उसने, पर कहीं नजर नहीं आयीं। यह तो अच्छी आफत आन पड़ी! उनके घोंसले में साँप घुस गया क्या! जल्दी से जाकर वह नौकर को बुला लायी। नौकर कुछ पल मुँह उठाये देखता रहा, फिर बोला, "पत्थर फेंककर देखूँ?"

"पत्थर फेंकोगे? यदि उन लोगों ने अन्दर अण्डे दे रखे हों तो! तुम चढ़ नहीं सकते पेड़ पर?"

"नहीं।"

"तो फिर उपाय?"

नौकर ने ताड़ के पेड़ के नीचे जाकर उसे हिलाने की कोशिश की, पेड़ जरा भी नहीं हिला।

"कहीं से सीढ़ी का जुगाड़ कर सकते हो?"

"सीढ़ी से क्या होगा?"

"सीढ़ी लगाकर तो तुम चढ़ सकते हो।"

"यह मुझसे नहीं होगा। वहाँ चढ़कर जान दूँगा क्या? यदि सही में वहाँ साँप हुआ और वह मेरे पीछे पड़ गया तो? बाप रे बाप, यह मुझसे नहीं होगा माईजी।"

डाना को लगा, साँप का केंचुल हिल रहा है। वह खुद को असहाय पा रही थी। दिन-दहाड़े उसकी आँखों के सामने इतनी बड़ी एक दुर्घटना घट रही थी और वह कुछ नहीं कर सकेगी, खड़े-खड़े देखते रहेगी सिर्फ! नहीं, यह नहीं हो सकता। कुछ तो करना ही पड़ेगा।

"तुम पहले एक सीढ़ी जुगाड़ करके लाओ तो। तुम नहीं चढ़ना चाहते, तो मैं चढ़कर देखूँगी।"

"सीढ़ी मैं कहाँ से लाऊँ?"

"मैं आनन्दबाबू के नाम हाथ-चिट्ठी लिख देती हूँ। चिट्ठी लेकर तुम भागे जाओ। वे एक सीढ़ी का जुगाड़ जरूर कर सकते हैं। भागके जाना और भागके आना।"

डाना ने कमरे में आकर जल्दी-जल्दी चिट्ठी लिखी-

'श्रद्धास्पदेषु,

बहुत मुश्किल में पड़ गयी हूँ। ताड़ के पेड़ वाले मैनों के घोंसले में साँप घुस गया है। एक सीढ़ी चाहिए। एक आदमी भी भेज सकें, तो अच्छा रहेगा। आपको आने का कष्ट नहीं उठाना है, एक सीढ़ी मिल जाय, तो मैं सम्भाल लूँगी। आप बिलकुल नहीं आईएगा। आने से मैं गुस्सा करूँगी। विपत्ति के समय पुरूष की मदद के बिना भी हमलोग स्थिति सम्भाल सकते हैं- इसे मेहरबानी करके जाँचने का अवसर दीजिए। इति-

डाना'

बीते दिन मनुष्य-निर्मित आडम्बरयुक्त कृत्रिम घोंसले में मैनों के जोड़े को देखकर कवि के मन में जो बेसुरा राग बजा था, उसी ने अगले दिन उन्हें एक कविता लिखने के लिए प्रवृत्त किया। तात्कालिक कारण था, एक काला कौआ।

काला कौआ उनके घर के सामने एक डाली पर बैठकर तारस्वर में चीत्कार कर रहा था। मन्दाकिनी होतीं, तो उसके कर्कश 'काँ- काँ- काँ-' स्वर को बिलकुल बर्दाश्त नहीं करतीं, कौए को भगाकर ही दम लेतीं। कवि लेकिन उद्‌बुद्ध हुए और छन्दों में गूँथकर खा-म-खा कौए को उपदेश देने बैठ गये। दो लाईन लिखने के बाद उन्हें महसूस हुआ कि जैसे ही भाव जमेगा, ठीक उसी समय खून के मामले के कागजात लेकर कुबड़ा गणेश गुमश्ता आकर हाजिर हो जायेगा। छन्द मन में ही रह गया और उनकी भौंहें सिकुड़ गयीं। क्रोध भी आया, लगा कि आने पर उसे भगा ही दिया जायेगा, लेकिन साथ-ही-साथ यह भी अनुभव हुआ कि इससे छन्द बिखर जायेंगे। गणेश के साथ-साथ कविता भी प्रस्थान कर जायेगी। किया क्या जाय! गणेश को कैसे टरकाया जाय- कहीं सही में वह आ गया तो? अचानक ध्यान आया- एक उपाय है। ठाकुर को बुलाया। त्रिपुण्डधारी मैथिल ठाकुर दरवाजे पर आकर अपनी अधकचरी शैली की बँगला में बोला, "आमाके डाकियेसेन बाबू?" ('मुझे बुलाया है बाबू')

"देखो, अभी यदि कोई मिलने आये, तो उससे कहना कि बाबू की तबियत ठीक नहीं है, अभी किसी से भी भेंट नहीं करेंगे।"

"बेश। भात तो रान्ना कोरियेसी, दू-चार ठो रोटी कि बानाबो? शोरिर जोखन खाराप- " ('ठीक है। भात तो पका लिया है, दो-चार रोटियाँ भी बना दूँ? जब तबियत ठीक नहीं- ')

"नहीं, भात ही खाऊँगा।"

ठाकुर चला गया। कवि ने खिड़की से बाहर की ओर देखा। काला कौआ तब भी पुकार रहा था। उसे उद्देश्य कर कवि ने लिखा-

बलिष्ठ काले कौए
जो हो, वही रहो तुम
बुलबुल भला किस दुःख में बनो तुम?
(कुल 28 पंक्तियों की कविता)

डाना के नौकर द्‌वारा आनन्दबाबू के बैठकखाने का कड़ा बजाते ही ठाकुर आकर हाजिर हुआ। वह मानो मौके के इन्तजार में ही बैठा हुआ था।

"बाबू की तबियत खराब है। मुलाकात नहीं होगी।"

"माईजी ने मुझे एक 'मोई' लेने के लिए भेजा है।"

"'मोई'? माने सीढ़ी?"

"हाँ।"

"सीढ़ी तो हमारे यहाँ है नहीं।"

"किनके यहाँ है?"

"रूपचन्दबाबू के यहाँ लम्बी-सी सीढ़ी देखी है एक। वहाँ जाने से मिल सकता है।"

"ठीक है।"

रूपचन्दबाबू ऑफिस जा चुके थे।

नियमानुसार चण्डी आ चुका था बकुलबाला के पास। वह एक दुःसंवाद लेकर आया था। बहुत कोशिशों के बाद भी गणेशा इस बार पीली चिड़िया का घोंसला नहीं खोज पाया था। पीली चिड़िया के घोंसले की खोज पर चण्डी का भी भविष्य दाँव पर लगा हुआ था। बकुलबाला ने उससे वादा कर रखा था कि यदि वह पीली चिड़िया का बच्चा लेकर आ सके, तो वे उसे एक 'एयर-गन' खरीदवा देंगी। बेशक, इसके लिए चण्डी को भी 'तीन-सच्ची' कसम खानी पड़ी थी कि वह एयर-गन से कौए के अलावे किसी और चिड़िया को नहीं मार सकेगा। बिल्ली, नेवला, सियार, पगला कुत्ता- इन पर निशाना साध सकता था, पर गिलहरी, बकरी के बच्चे, गाय के बछड़े पर बिलकुल नहीं। चण्डी इन शर्तों पर राजी था, लेकिन गणेशा ने जो बताया, उससे तो इस साल एयर-गन मिलने की आशा निराशा में बदल गयी थी।

बकुलबाला एक धनुष पर डोरी चढ़ा रही थीं। उद्देश्य- बदमाश कौओं को सबक सिखाना। दरअसल, बकुलबाला इन दिनों थोड़े आराम के साथ बरामदे पर 'उठे चूल्हे' पर खाना पकाना चाहती थीं (इतनी गर्मी में भला उस दड़बेनुमा रसोईघर में टिका जा सकता था!), लेकिन कौओं की बदमाशियों के कारण यह हो नहीं पा रहा था। जरा भी हिलने का उपाय नहीं था- कभी कौआ भुनी मछली लेकर भाग जाता था, तो कभी दूध में चोंच डूबा देता था। तंग आ गयी थीं वे। आज उन्होंने तय कर लिया था कि तीर-धनुष से कौओं को भगाने के बाद ही वे खाना पकाने बैठेंगी। तीर-धनुष बगल में रखा रहेगा, तो मुँहजले पास नहीं फटकेंगे।

चण्डी के मुँह से दुःसंवाद सुनकर सिर्फ भौंहों को सिकोड़ा उन्होंने। भाव था- तुम परले दर्जे के नालायक हो- यह मुझे पहले से पता था।

प्रकट में उन्होंने कहा, "डोरी पहनाना जरा। मैं कमची को दबाकर पकड़ती हूँ। खूब कस-कस के बाँधना।"

(कमची- बाँस को लम्बाई में चीरकर निकाले गये लचकदार टुकड़े, 'बत्ती' या 'खपच्ची' भी कहते हैं; बँगला में 'बाँखारि' शब्द का प्रयोग हुआ है।)

चण्डी ने यथासाध्य कसकर डोरी को बाँध दिया।

"अब तीर चलाओ तो एक। मारो उस कौए को। मुँहजले ने सुबह से परेशान कर रखा है।"

"तीर कहाँ है?"

"वो रहा। सुबह से तीर ही तो बना रही थी। अकेले बाँस चीरकर बनाया मैंने। तुम तो अब जाकर आये हो।"

धनुष पर तीर चढ़ाकर निशाना साधते ही कौआ उड़कर भाग गया। आस-पास जो दो-एक थे, वे भी उड़ गये।

"यही इनका ईलाज है।"

बकुलबाला की आँखें चमक उठीं।

"लाओ-लाओ, एक बार देना मुझे- "

एक कौआ थोड़ी दूरी पर मित्तिर लोगों के सीढ़ीघर की छत पर आकर बैठा था फिर। बकुलबाला तीर-धनुष को आँचल में छुपाकर दबे पाँव उस ओर बढ़ने लगीं।

"अब चलाईए।" चण्डी फुसफुसा कर बोला।

अच्छे-से निशाना लगाकर बकुलबाला ने तीर चलाया। जरा-सा के लिए बच गया कौआ, उसके सिर के पास से तीर गुजर गया। कौआ 'काँव-काँव' का शोर मचाते हुए उड़कर भागा।

"तीर खोजकर ले आओ।"

चण्डी तीर के समान भागा और कुछ ही पलों में तीर उठाकर ले आया। ऐसे मामलों में वह उस्ताद था एक।

"वहीं रख दो। सब सजाकर रखना।"

चण्डी ने चुपचाप आदेश का पालन किया।

अब बकुलबाला पीली चिड़िया के प्रसंग पर आयीं-

"गणेशा को इस बार पीली चिड़िया का घोंसला दिखा ही नहीं?"

"अमरबाबू के आम-बागान में बीते साल गणेशा ने पीली चिड़िया का घोंसला देखा था। इस साल उस बागान में पीली चिड़िया ही नजर नहीं आ रही है। गणेशा बता रहा था कि अमरबाबू के लोगों ने तरह-तरह के जाल और फन्दे

बिछाकर और बन्दूकें दागकर चिड़ियों को भड़का दिया है। इस साल शायद चिड़ियाँ इस इलाके में घोंसले न ही बनाये।"

"धत्त! ऐसा कभी होता है? यहाँ की चिड़ियाँ क्या घोंसला बनाने के लिए दिल्ली और मक्का चली जायेंगी? गणेशा बेवकूफ है, कुछ नहीं जानता। तुम खुद ही खोजकर देखना न।"

"मैं तो पीली चिड़िया का घोंसला पहचानता ही नहीं।"

"चिड़िये का घोंसला पहचानना कौन-सी बड़ी बात है? देखे नहीं हो घोंसला?"

"हमारे घर के छज्जे में एक बार मैनों ने घोंसला बनाया था। कौए का घोंसला भी देखा है। बया के घोंसले भी देख रखे हैं मैंने, लेकिन सब तो अलग-अलग होते हैं। पीली चिड़िया का घोंसला तो कभी देखा ही नहीं मैंने।"

"गणेशा ने देखा है न, उसीसे से पूछ लेना।"

"ठीक है।"

इसी समय बाहर दरवाजे से आवाज आयी, "बाबू घर में हैं क्या?"

"देखना तो, इस समय कौन आ गया?"

चण्डी बाहर गया। डाना के नौकर को वह पहचानता था। आनन्दबाबू को डाना द्वारा लिखी हाथ-चिट्ठी लेकर वह अन्दर आया फिर।

"अमरबाबू के बागानबाड़ी में जो लड़की रहती हैं, उन्होंने एक सीढ़ी के लिए आनन्दबाबू को लिखा है। आनन्दबाबू ने यहाँ भेज दिया है।"

"चिट्ठी पढ़ना जरा।"

डाना के बारे में इक्की-दुक्की बातें बकुलबाला ने रूपचँद से सुन रखी थीं। सुना था कि लड़की अच्छी पढ़ी-लिखी है ओर अमरबाबू ने दो सौ रुपये महीने पर उसे नौकरी दे रखी है। डाना के सम्बन्ध में बकुलबाला के मन में एक कौतूहल तो था ही, चिट्ठी सुनने के बाद यह और भी बढ़ गया। बहुत उत्साहित हो उठीं वे। कितना अच्छा लिखा है उन्होंने! बेशक, पुरूषों की मदद लेनी ही होगी- यह कोई जरूरी तो नहीं। कल्पना में उन्हें मैनों के घोंसले में घुसा साँप दिखायी पड़ने लगा। बहुत पहले, बचपन में उन्होंने ऐसा एक वाकया अपनी आँखों से देखा था। उनके कबूतरों के दड़बे में साँप घुस गया था। एकाएक उनकी सारी शक्तियाँ उद्दीप्त हो गयीं।

बोलीं वे, "चण्डी, तुम तीर-धनुष साथ में लो। नौकर को बुलाओ, सीढ़ी लेकर चलेगा वह। हमलोग भी चलेंगे, चलो।"

डाना को देखकर बकुलबाला वास्तव में अवाक् रह गयीं। उन्होंने सोच रखा था कि मेम साहब-जैसी अदाओं वाली किसी महिला को देखेंगी वे। महीन धारियों वाली साड़ी पहने हुए, छरहरी देहयष्टि वाली ये ही डाना हैं क्या? कितने सुन्दर नैन-नक्श हैं! यह तो बच्ची है! उन्हें बहुत अच्छी लगी वह।

"नमस्कार।"

डाना की ओर बढ़कर गर्मजोशी से नमस्कार किया उन्होंने।

"नमस्कार, लेकिन माफ कीजिए, मैं आपको पहचान नहीं पा रही हूँ।"

"मैं बकुलबाला हूँ। अपने पति के मुँह से आपके बारे में बहुत सुना है मैंने।"

"अच्छा, कौन हैं आपके पति?"

बकुलबाला ने चण्डी से कहा, "बता न रे।"

"रूपचँदबाबू।"

"ओह, रूपचँदबाबू की पत्नी हैं आप! आईए-आईए। ...मैं एक मुश्किल में पड़ गयी हूँ। वहाँ देखिए- "

बकुलबाला ने दोदुल्यमान केंचुल की ओर देखा एक बार।

"सब सुन लिया है मैंने। आनन्दबाबू के पास सीढ़ी नहीं थी। आदमी घूमकर मेरे घर गया था। उसके हाथ आपने जो चिट्ठी भेजवायी थी, उसे चण्डी ने मुझे पढ़कर सुनाया। मैं खुद कुछ पढ़ना-लिखना नहीं जानती- जिसे काला अक्षर भैंस बराबर कहते हैं, वही। लेकिन आपने चिट्ठी में जो लिखा था, वह मुझे इतना अच्छा लगा कि मैं रह नहीं पायी, खुद चली आयी। बिलकुल सही बात है, छोटे-मोटे मामलों में पुरूषों की मदद क्यों लेने जायेंगे हमलोग? चलिए, देखते हैं। ...अरे सुनो, अब सीढ़ी दो मुझे इधर।"

डाना को कुछ बोलने का मौका दिये बगैर सीढ़ी हाथों में लेकर बकुलबाला ताड़ के पेड़ की ओर बढ़ गयीं। जब वे सीढ़ी को उठाकर बढ़ रही थीं, तब डाना उनकी दोनों बाँहों की मांसपेशियों को देखकर दंग रह गयी। बहुत दिनों पहले सर्कस में ऐसी महिला को देखा था उसने। लम्बी सीढ़ी को ताड़ के पेड़ से टिकाने के बाद डाना की ओर मुड़कर बकुलबाला बोलीं, "आईए आप।"

बकुलबाला का फेंटा कसा हुआ था ही, सिर का जूड़ा खुल गया था और वेणी पीठ पर लहरा रही थी। आँखें कौतूक से झिलमिला रही थीं। अद्भुत दृश्य था! डाना मुँह बाये सिर्फ देखे जा रही थी उनको।

बकुलबाला ने सहसा सफाई देने के अन्दाज में डाना से कहा, "आप शायद सोच रही होंगी कि नौकर से सीढ़ी ढुलवाने की फिर क्या जरुरत थी- क्या वह

पुरूष नहीं है? इसके उत्तर में मैं कहूँगी- जब उन लोगों को तनखा देकर रखा है, तो उनसे काम भी तो लेना है। जब वे नहीं रहेंगे, तब हम खुद सब करेंगे। है कि नहीं? आईए, सीढ़ी को नीचे से कसकर पकड़िए, मैं चढ़ती हूँ।"

डाना आगे बढ़ी। बकुलबाला के अप्रत्याशित आविर्भाव से शुरू में वह थोड़ी झुंझलायी थी, लेकिन उनके सरल और खुले मन की बातचीत से यह झुंझलाहट दूर गयी थी। रूपचँदबाबू की पत्नी इतनी मिलनसार हैं और अभी तक उनसे परिचय नहीं हुआ था!

"सुनिए, जोर से पकड़ कर रखिएगा सीढ़ी को।"

"आप चढ़ तो रही हैं, लेकिन वहाँ सही में साँप हुआ तो?"

"हो, तो हो! मेरा क्या कर लेगा? ऐ चण्डे, वो जो टहनी पड़ी है, मुझे थमाओ तो। नजदीक जाकर इसी से पहले खोंचा मारूँगी। साँप होगा, तो फुंफकारेगा, या फिर, बाहर निकल आयेगा।"

चण्डी ने टहनी लाकर दिया, बकुलबाला ने उसे कमर में तलवार की तरह खोंस लिया। फिर चढ़ना शुरू किया उन्होंने। डाना ने मजबूती के साथ सीढ़ी को थाम रखा था। मैनों का दल आर्त्तस्वर में चीख-पुकार मचाने लगा। दो-एक ने उड़ते हुए आकर बकुलबाला के सिर पर चोंच मारने की भी कोशिश की। बकुलबाला कमर से टहनी को निकाल कर उसे तलवार की तरह भाँजते हुए ऊपर चढ़ने लगीं।

"और ऊपर मत जाईए। यही से खोंचा मारकर देखिए, अन्दर कुछ है कि नहीं!"

बकुलबाला सरपट काफी ऊपर तक चढ़ गयी थीं। घोंसला टहनी के दायरे में आ गया था। पहले उन्होंने केंचुल पर खोंचा मारा, खोंचा लगते ही वह लहराते हुए नीचे गिर गया। अब घोंसले में खोंचा मारा, कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। इसपर वे सीधे ऊपर चढ़ गयीं और उचक कर घोंसले के अन्दर देखने लगीं। डाना उत्सुकता के साथ चेहरा ऊपर किये खड़ी थी, बकुलबाला कौतुक से चमकती अपनी दृष्टि उसपर डालते हुए बोलीं, "साँप-वाँप कुछ नहीं है। चार नीले रंग के अण्डे हैं। लेकर आने हैं?"

"नहीं-नहीं, अण्डे किसलिए लाने! बच्चे होंगे, फिर देखा जायेगा। आप उतर आईए।"

सधे कदमों से बकुलबाला फटाफट सीढ़ियाँ उतर गयीं।

"अच्छा, एक बात बताईए, साँप का यह केंचुल वहाँ तक गया कैसे होगा फिर?"

डाना को इस सवाल का कोई जवाब नहीं सूझ रहा था, इसलिए पूछा उसने। बकुलबाला ने जवाब दिया। बोलीं, "ये करमजलियाँ ही चोंच में करके ले गयी होंगी। कौन दोस्त है, कौन दुश्मन- यह समझने की बुद्धि इनमें थोड़े होती है! देखा न, मुझे ही चोंच मारने जा रही थीं, जबकि मैं उनके घोंसले से साँप भगाने जा रही थी। उनके दिमाग में बुद्धि होती, तो फिर सोचना ही क्या था!"

"चलिए, चाय बना दूँ आपके लिए।"

"यह भी कोई चाय पीने का समय है? चाय पीऊँगी जाकर पाँच बजे, उनके ऑफिस से आने के बाद।"

"फिर भी चलिए, कुछ देर बैठिएगा।"

"हाँ, बैठा जा सकता है, चलिए।"

कमरे में आने के बाद डाना के टेबल पर रखी मोटी-मोटी पुस्तकें देखकर बकुलबाला अचम्भित रह गयीं।

"ये सब आप पढ़ती हैं?"

"पढ़ती हूँ बीच-बीच में। अमरेशबाबू दे गये थे, चिड़ियों के बारे में कुछ जानना हो, तो उलट-पलट कर देख लेती हूँ।"

"अच्छा, इनमें चिड़ियों की बातें हैं? सभी चिड़ियों की किताबें हैं?"

"हाँ। बहुत सारी चिड़ियों की तस्वीरें भी हैं, देखिए न।"

"पीली चिड़िया की तस्वीर है?"

"पीले रंग की चिड़ियाँ तो कई हैं, आप किसकी बात कह रही हैं?"

"पीलक, और कौन-सी?"

"ओह, अच्छा। बहुत सुन्दर तस्वीर है, दिखाती हूँ आपको।"

तस्वीर निकाल कर दिखाते ही बकुलबाला ने एक तरह से झपट लिया किताब को। चण्डी भी उत्साह में आकर झपट रहा था, लेकिन बकुलबाला की डपट खाकर बेचारे को हाथ हटाना पड़ा।

"तुम छोड़ो तो। पहले मैं देख लूँ, फिर दूँगी तुम्हें। उतावले क्यों हो रहे हो?...वाह, कितनी सुन्दर है! जैसे असली चिड़िया डाली पर बैठी हो! इसका एक बच्चा पालने की मेरी बहुत इच्छा है, लेकिन कहीं मिल नहीं रहा है।"

डाना ने कहा, "हम लोगों ने कुछ बहेलियों को बुलवा रखा है सभी तरह की चिड़ियों के बच्चों को खोजने के लिए। पीली चिड़िया का बच्चा यदि मिला, तो आपके पास भेजवा दूँगी।"

"भेजवा दीजिएगा? सच्ची? खाईए 'तीन-सच्ची' कसम।"

बकुलबाला ने चमकती आँखों के साथ डाना के हाथ दोनों थाम लिये।

इतने बचपने की आशा डाना ने नहीं की थी। पहले तो वह भी बच्चों की तरह हँस पड़ी, फिर गम्भीर हुई वह।

"'तीन-सच्ची' कसम की क्या जरुरत? मिलने पर जरूर भेजवा दूँगी।"

बकुलबाला की जिद और बढ़ गयी।

"नहीं, आप तीन बार बोलिए- 'भेजवा दूँगी', 'भेजवा दूँगी', 'भेजवा दूँगी।' बोलना ही होगा आपको।"

बकुलबाला की आँखों में देखकर डाना अवाक् रह गयी। आँखों में एक अस्वाभाविक किस्म की चमक थी। सिर्फ 'तीन-सच्ची' कसम से ही छुटकारा नहीं मिला डाना को, देह पर हाथ रखकर भी वादा करना पड़ा। वादा होते ही बकुलबाला का चेहरा खुशी से खिल उठा।

"अब मुझे चलना चाहिए। वे ऑफिस से आने वाले होंगे, अभी तक खाना-वाना कुछ बना नहीं है। ऐ चण्डी, उठ।"

चण्डी आँखें फाड़े नाना प्रकार की चिड़ियों की तस्वीरें देख रहा था। क्या रंग-बिरंगी चिड़ियाँ थीं!

"यह कौन-सी चिड़िया है?"

"धनेश।"

बकुलबाला खिलखिला कर हँस पड़ीं।

"धनेश नाम किसी चिड़िया का भी होता है! धनेश नाम सुनकर तो मुझे अपने गाँव के धनेश मोयरा की याद आ जाती है- मोटा, काला, गोल-मटोल था वह, देखकर लगता था, एक तरबूज रास्ते से जा रहा हो। मुझे देखते ही बोलता था- 'गुलाब-जामुन खाओगी? चलो दूकान में।' मैं तो उसे देखते ही भाग खड़ी होती थी। ...यह चिड़िया तो देखने में अद्भुत है, चोंच के ऊपर फूला हुआ लग रहा है। ...चण्डी, तुम उठोगे या नहीं, बोलो। नहीं उठे, तो मैं चली अकेले।"

बकुलबाला चण्डी के साथ चल पड़ीं। डाना अकेले बैठे-बैठे बकुलबाला के ही बारे में सोचने लगी। अच्छी महिला लगीं वे। स्वाभाविक रूप से रूपचँद की बात भी याद आयी। ऐसे शातिर व्यक्ति की ऐसी सरल पत्नी! इतनी अच्छी, सहज-

सरल, स्वास्थ्यवती जीवनसंगिनी पाने के बाद भी कंगले-जैसा क्यों करते हैं वे? महसूस हुआ, शायद सहज-सरल होने के कारण ही मन नहीं मिला है। तड़क-भड़क वाली तेज-तर्रार होती, तो शायद पसन्द आती। उसकी चिन्ताधारा विघ्नित हुई। दौड़ते हुए बकुलबाला फिर आकर हाजिर हुईं।

"एक बात मना करना भूल गयी थी आपको। उनके सामने कभी भूलकर भी जिक्र नहीं कीजिएगा कि मैं यहाँ आयी थी।"

"क्यों?"

"अरे बाप! मुझे तो कच्चा चबा जायेंगे वे। मेरा कहीं जाना पसन्द नहीं उनको।"

"पीली चिड़िया का बच्चा यदि मिला, तो कैसे भेजवाऊँगी आपके पास?"

"यह चण्डा लेने आयेगा। बीच-बीच आकर यह खोज-खबर लेता रहेगा। चण्डे, भूल मत जाना।"

"नहीं भूलूँगा।"

चण्डी ने सिर हिलाकर जता दिया कि भूलने का सवाल ही नहीं है।

"चलती हूँ। दौड़ने के चलते हाँफ गयी हूँ।"

बकुलबाला हँसने लगीं।

"अच्छा, चलती हूँ फिर।"

"ठीक है। बीच-बीच में छुपकर आते रहिएगा। मैं रूपचँदबाबू को कुछ नहीं बताऊँगी।"

"अच्छा आऊँगी। चण्डे, चल हम लोग बागान होकर जायेंगे। रास्ते से जाने से कोई देख न ले। दिन चढ़ आया है, लोगों की आवाजाही शुरू हो गयी है।"

"ठीक है।"

चण्डी को लेकर बकुलबाला चली गयीं। जाते-जाते एकबार मुड़कर डाना की ओर देख मुस्कुराईं वे। इसके बाद मोड़ पर अदृश्य हो गयीं। डाना कुछ देर चुपचाप खड़ी रही। विस्मित थी वह। अद्भुत महिला हैं! उम्र बढ़ गयी है, लेकिन मन बचपने में है। शरीर मन के अल्हड़पन के साथ मुकाबला नहीं कर पा रहा था, हाँफ जा रहा था; लेकिन इस तरफ उनका ध्यान ही नहीं था। थोड़ी ईर्ष्या जन्मी मन में। लगा, आधुनिकता की जटिल मानसिकता, साहित्य-विज्ञान-कला की चर्चा, सब इस सरलता के सामने तुच्छ हैं। भला पेड़ के फूल के साथ कागज का फूल मुकाबला कर सकता है कभी? अकारण ही उसका मन एक क्षोभ से भर गया। फिर ध्यान आया, चिड़ियों के पंख पर लेख का जो खाका बनाया था

उसने, उसका कुछ हिस्सा लिखकर उसने छोड़ रखा है। मैनों के घोंसले को लेकर कुछ समय बीता, कुछ समय बकुलबाला के साथ बीत गया, अब दिमाग लगाया जाय- चिड़ियों के पंख पर। अभी तो समय काटना ही जीवन की मुख्य समस्या बनी हुई थी।

कमरे में आकर चिड़ियों के पंख से सम्बन्धित तथ्यादि संग्रह करने के लिए किताबें पलटने लगी वह। अमरबाबू ढेर सारी किताबें रख गये थे उसके लिए। पढ़ते हुए महसूस होता था- यह तो अतल, अथाह है, लेकिन इस अथाह सागर में कोई कष्ट नहीं होता था। उल्टे, नये-नये विस्मय से मन रोमांचित होता था। साँप सरीसृप की श्रेणी में आता है और उसी सरीसृप वर्ग से पक्षीवर्ग भी विकसित हुआ है- इस बात पर सहसा विश्वास नहीं होता, जबकि वैज्ञानिकों का यही मानना है। सरीसृपों के शरीर के शल्कों ने ही पंखों का रूप धारण किया है! कहते हैं कि सरीसृप-पूर्वजों के शल्क पक्षियों के शरीर पर अब भी मौजूद हैं- पक्षियों के नाखून को शल्कों से निर्मित बताया जाता है, किसी-किसी पक्षी के चोंच को भी। इनके चोंच प्रतिवर्ष केंचुल भी छोड़ते हैं, साँप की तरह! ये सब जानकारियाँ डाना के लिए अब तक कल्पनातीत थीं, जबकि वैज्ञानिक पर्यवेक्षणों में ये बातें सत्य साबित हो चुकी हैं- अस्वीकार करने का कोई उपाय नहीं था। जो सरीसृप सीने को जमीन पर घसीटते हुए रेंगते थे, उन्हीं में से कुछ ने क्रमशः पिछले दोनों पैरों पर खड़े होकर सिर उठाकर चलना सीखा, इसके बाद इनमें से कुछ ने पेड़ पर चढ़ना सीखा और फिर उनमें से कुछ ने हवा में उड़ना सीखा। अब आकाश को पीछे छोड़ और भी कहीं जायेंगे क्या? क्या पता, जा भी चुके हों और हमें पता नहीं है। आकाशचारी होने के बाद इनकी चंचलता तो बढ़ी ही है, दृष्टिशक्ति और श्रवणशक्ति भी कई गुना बढ़ा गयी है। घ्राणशक्ति घटी है- बताया जाता है। यही कारण है कि दुर्गन्धयुक्त स्थानों में भी ये अनायास ही घूम-फिर सकती हैं, दुर्गन्धयुक्त कीड़े-मकोड़ों को भी स्वछन्दता के साथ निगल जाती हैं। घ्राणशक्ति घटने से देखा जाय, तो एक बाधा ही दूर हुई है इनकी, जीवन का और भी तीव्रता से उपभोग कर रही हैं ये।

वस्तुतः चिड़ियों-जैसी स्वतःस्फूर्त चंचलता प्रकृति के और भी किसी प्राणी में है क्या? चिड़ियों का असली परिचय उनकी प्राणलीला में है। जब जागी रहती हैं वे, पल भर के लिए भी स्थिर नहीं रहतीं। नाचकर, गाकर, उड़कर, रंगों की बहार लुटाकर वे हर वक्त सबको बताती रहती हैं कि हम सिर्फ जिन्दा नहीं हैं, हम जीवन का उपभोग कर रहे हैं। उनकी इस तीव्र, छन्द-मुखरित, वर्ण-विचित्र

जीवन-यात्रा में उनके पंख प्रमुख भूमिका निभाते हैं। ये पंख उनके शरीर की रजाई है (बेशक, उनके पंख चुराकर हम भी रजाई बनवाते हैं), ये पंख उनके यान-वाहन भी हैं, इन्हीं के सहारे वे उड़ती हैं। इन पंखों से वे शत्रुओं से आत्मरक्षा भी करती हैं। आस-पास के वातावरण के साथ पंखों के रंगों को पूरी तरह से घुला-मिला कर वे शत्रुओं की आँखों में धूल झोंकती हैं- एक जीवित चिड़िया नजर ही नहीं आती। लगता है, झाड़ियों के अन्दर वह छाया-प्रकाश की एक कलाकारी है- वनमुर्गी नहीं, या फिर, गंगा के किनारे पर वे रेत की लहरें हैं- टिट्टिव नहीं। इनके अलावे, पंखों के माध्यम से वे नाना प्रकार की प्रणयलीला भी करती हैं। नर चिड़ा नाना वर्णों के पंखों को फैलाकर प्रणयिनी को आकर्षित करता है। प्रणयिनी भी प्रत्युत्तर देती है पंखों के माध्यम से। कुछ चिड़ियाँ ऐसी भी हैं, जो पंखों से ही घोंसला बनाती हैं अण्डे देते समय। कुल-मिलाकर, चिड़ियों के जीवन में पंख अपरिहार्य है, इसी से उनका व्यक्तित्व बनता है। दो प्रजाति की दो चिड़ियाँ पंखों के कारण ही अलग-अलग हैं, पंख हटा देने पर कुछ विशेष अन्तर नहीं रह जाता।

पंखों के रंगों के बारे में भी एक आश्चर्यजनक बात नजर आयी उसे। साधारणतया, प्राणियों के शरीर के अन्दर से ही रंगों का निर्माण होता है। चिड़ियों में भी होता है। लेकिन बहुत-सी चिड़ियों के पंखों की बनावट इतनी विचित्र होती है कि सूर्य का प्रकाश उनपर पड़कर विघटित हो जाता है और इस विघटित प्रकाश के विभिन्न रंग पंखों से परावर्तित होते हैं। आकाश में जैसे हम इन्द्रधनुष के विभिन्न रंग देखते हैं, काफी कुछ वैसा ही। ये रंग प्रकाश के होते हैं, पंखों के नहीं। बेशक, सभी चिड़ियों के पंखों में प्रकाश का यह खेल नहीं होता, कुछ चिड़ियों के पंखों की बनावट की विशेषता के चलते ऐसा होता है।

पन्ने पलटते हुए एक और जानकारी पर ध्यान गया उसका। अद्भुत जानकारी थी। करोड़ों-करोड़ साल तक धरती के प्राणी गूँगे थे, उनके मुँह से भाषा बहुत बाद में निकली। मेरूदण्डहीन प्राणियों में अब भी बहुत-से मूक हैं। इनमें से बहुतेरे शब्द जरूर पैदा करते हैं, लेकिन वह कण्ठ से निःसृत नहीं होता, वह होता है शरीर के अन्यान्य अंग-प्रत्यंगों से। पतंगे शरीर के एक अंग के साथ दूसरे अंग के घर्षण से शब्द पैदा करते हैं। मेरूदण्डधारी उभयचर ही सर्वप्रथम कण्ठस्वर के अधिकारी हुए थे। मत्त दादुर मेंढ़कों ने ही सर्वप्रथम गाना गाया था और इस गाने का एकमात्र उद्देश्य था, प्रणयिनी का आह्वान।

कवि ने हड़बड़ाते हुए प्रवेश किया।

"यह तो महा-मुश्किल में फँस गया मैं।"

"क्या हुआ?"

"उसी खून के मामले में मुझे अभी सदर एस.डी.ओ. के पास भागना होगा। क्या झमेला है यह, बताईए तो! अमरेशबाबू ने तो मुझे एक खतरनाक कोल्हू में जोत दिया। तुम्हें भी। तुम्हारे लिए भी एक दुःसंवाद है। एक मच्छेरा उल्लू कुछ खा नहीं रहा है। बेशक, यह माली का वर्शन है, तुम जरा देख आओ। माली काफी मुटियाया हुआ नजर आ रहा था। क्या पता, उल्लू के हिस्से का 'कीमा' वही खा रहा हो!"

इतना कहकर कवि डाना के चेहरे की ओर अपलक दृष्टि से देखने लगे- धूप की तेज से डाना का मुखमण्डल रक्तिम हो उठा था।

"क्या देख रहे हैं?"

"तुम्हें। गजब दिख रही हो। इस प्रचण्ड धूप में तुम्हारा एक अद्भुत रूप उभर आया है। ...ठहरो।"

टेबल के एक किनारे कवि बैठ गये। कुछ देर आँखें बन्द रखने के बाद एक कागज लेकर लिखा उन्होंने-

मरूभूमि की तप्त वायु में
काँटों के वन में खिलते गुलाब
पथिक भटक जाते राह
असम्भव के आमंत्रण पर
(कुल 12 पंक्तियों की कविता)

कविता पढ़कर डाना बोली, "यह क्या हुआ?"

"हुआ कुछ, चाहे जो भी हो। गुलाब के साथ प्रलाप मिलाना चाह रहा था, नहीं हुआ। समय नहीं है अभी। मैं चला। तुम जरा उल्लू की खबर ले लेना।"

कवि चले गये। डाना ने भौंहे सिकोड़ कर कविता को फिर एक बार पढ़ा। आनन्द आया, भय भी लगा। विचित्र स्वभाव है सज्जन का। पिता की उम्र के हैं, पर मन किशोरों-जैसा है। उनके इरादे में कोई खोट तो नजर नहीं आती, फिर भी...

मच्छेरा उल्लू की खोज-खबर लेने डाना निकल पड़ी। ऐसे समय में बाहर निकलना पड़ा- इस पर बुरा भी लगा बहुत। एक ही बात मन में उमड़ने-घुमड़ने लगी कि अर्थाभाव के कारण ही यह सब करना पड़ रहा है। फिर याद आया, कवि भी यही बात कह रहे थे। अर्थाभाव ने सबको कोल्हू में जोत रखा है, कोल्हू

भी अलग-अलग प्रकार के। अमरबाबू की याद आयी। दूसरे देशों के वैज्ञानिकगण पक्षियों पर जिस तरह की गवेषणा कर रहे हैं, अर्थाभाव में उस तरह की गवेषणा न कर पाने का क्षोभ अमरबाबू-जैसे अमीर आदमी ने भी व्यक्त किया था एक दिन- डाना को याद आया। विचित्र चीज है यह रुपया। सभी को रुपये की जरुरत है, सभी को इसका लोभ है।

'ककरिंग्- ककरिंग्- '

डाना ने गर्दन घुमाकर देखा, बादामी रंग की चिड़िया लम्बी दुम लटकाये आम की डाली पर हिल-हिल कर पुकार रही थी। इसके बाद नजर पड़ी, सन्न्यासी आ रहे थे, हाथ में कुछ था उनके। कुछ नजदीक आने पर डाना ने पूछा, "क्या लिये आ रहे हैं?"

"सब्बल।"

"शॉवेल! क्या करेंगे इसका? ओ-हो, आपकी झोपड़ी का कोई खूँटा गिर गया है शायद? इसके लिए आप क्यों कष्ट कीजिएगा, मैं कल अपने नौकर को भेज दूँगी, वह ठीक कर देगा। मुझे बताना था एक बार, मैं पहले ही ठीक करवा देती।"

सन्न्यासी कुछ न बोलकर मुस्कुराये सिर्फ। फिर अपने गन्तव्य पथ पर चल पड़े। डाना कुछ पल देखती रही उनको। मन में लगा, यह व्यक्ति बिलकुल स्वतंत्र है। जल्दी किसी से घुलते-मिलते नहीं, बातें नहीं करते, अपने-आप में ही मग्न होकर उस टूटी झोपड़ी में रहते हैं, लेकिन फिर भी, इन्हें नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। सच तो यह था कि डाना का मन इनको लेकर सपने बुनने लगा था। रूपचँदबाबू की लोलुपता, कवि का कवित्व, अमरेशबाबू का पक्षी-विज्ञान- ये सभी उसे यदा-कदा अच्छे न लगे हों, ऐसा नहीं था, लेकिन उनको लेकर उसका मन सपने नहीं बुन सकता। डाना चलते हुए सोच रही थी, बुन क्यों नहीं सकता? क्या सामाजिक बाधा के चलते? लेकिन ऐसी कोई बाधा तो नहीं थी। अगर कोई सामाजिक बाधा होती, तो सन्न्यासी के मामले में उसे और भी प्रबल होना चाहिए था। इसके अलावे, समाज के साथ तो मनुष्य के बाहरी आचरण का ही सम्पर्क ज्यादा होता है, मन तो स्वाधीन है। मन को अच्छा लगना, बुरा लगना जिस काल्पनिक जगत की रचना करता है, उसके साथ बाहर के समाज का सम्पर्क नहीं होता। नहीं, कारण सामाजिक नहीं है, कुछ और ही है। कुछ पलों बाद डाना को लगा, सन्न्यासी का चरित्र रहस्यमयी होने के कारण ही क्या उसके मन में उनके प्रति कौतूहल जागा है? अगले ही पल महसूस हुआ,

ऐसा भी कौन-सा रहस्य है! कुछ भी तो धुंधला नहीं है। एक सामान्य सन्न्यासी हैं, टूटी झोपड़ी में अपनी मर्जी के मुताबिक रहते हैं, भिक्षाटन करते हैं, भजन करते हैं, पास जाने पर बातचीत करते हैं, किसी तरह का दिखावा नहीं करते, कुछ छुपाने का प्रयास नहीं करते, चमत्कार दिखाने के फेर में नहीं रहते। बहुत ही सहज-सरल व्यक्ति, खुले दिल के। उनके मुकाबले तो रूपचँद बहुत रहस्यमयी हैं। लेकिन रूपचँद को लेकर तो मन कोई सपने नहीं देखना चाहता। ...ऐसा क्यों? यही सब सोचते हुए डाना अन्यमनस्क होकर चली जा रही थी, मल्लिक महाशय निकट आ पहुँचे थे- इस तरफ उसका ध्यान ही नहीं गया।

"नमस्कार, आप ही के पास जा रहा था।"

"नमस्कार। मेरे पास? कोई काम था क्या?"

"सुना कि आनन्दबाबू आपके डेरे की तरफ आये हैं, काम दरअसल उन्हीं से था। कहाँ हैं वे?"

"थोड़ी देर पहले आये थे मेरे पास, लेकिन कहाँ एक खून हुआ है, उसी सिलसिले में वे एस.डी.ओ. के पास चले गये।"

"एस.डी.ओ. के पास! वहाँ जाने की कोई जरुरत ही नहीं थी। रूपचँदबाबू को सारी बातें बताने से वे ही सब सम्भाल लेते। वे ही तो पुलिस साहेब के दाहिने हाथ हैं। यही बात बताने के लिए उनके पास जा रहा था। बेशक, यह मेरा सरदर्द नहीं है, मैनेजर अभी मैं नहीं हूँ, मैनेजर आनन्दबाबू ही हैं, लेकिन इन जंजालों के लिए वे अभी नये हैं, इसलिए सोचा- उन्हें आगाह कर दूँ। अमरबाबू का नमक तो बहुत दिनों तक खाया है मैंने, इसलिए सोचा- जिससे उन्हें थोड़ी सुविधा हो, वह काम करना मेरा कर्तव्य है। कर्तव्य है कि नहीं?"

कर्तव्य है कि नहीं- इसका उत्तर न देकर डाना ने कहा, "अच्छा, उनके आने पर मैं आपकी बात बता दूँगी।"

"कहिएगा, जरूर कहिएगा। रूपचँदबाबू को मैं बोल दूँगा, लेकिन क्या है कि डिटेल्स मैं नहीं जानता हूँ न।"

"ठीक है।"

डाना पीछा छुड़ाकर निकल रही थी।

मल्लिक महाशय ने टोका, "इस तपती दुपहरिया में जा कहाँ रही हैं?"

"चिड़ियों की खोज-खबर लेने। सुना कि एक उल्लू बीमार है।"

"एक भी चिड़िया नहीं बचेगी। जंगलों की चिड़ियों को ऐसे रखने से वे जिन्दा बचेंगी? आप कहेंगी, चिड़ियाघर में कैसे रहती हैं तब? चिड़ियाघर के लिए

कितनी व्यवस्था होती है, कितना जतन होता है, गवर्नमेण्ट का एक अलग डिपार्टमेण्ट ही होता है इसके लिए, फिर भी तो मर जाती हैं। और आप लोग सोच रहे हैं, मुन्शी और दो-चार उचक्के किस्म के बहेलिए आप लोगों का चिड़ियाघर चला लेंगे! बकरे से बैल का काम हो जाता, तो कोई बैल खरीदता ही क्यों?"

"लेकिन वे लोग तो ठीक ही चला रहे हैं।"

"तोते कितने हैं, कभी गिना है आपने?"

"नहीं, गिना नहीं है। कुल दो मर गये हैं।"

"मरे नहीं हैं, मुन्शी ने बेच खाया है। एक मेरे बेटे ने खरीदा है और दूसरा खरीदा है चण्डी ने- जिस छोकरे का रूपचँदबाबू के घर खूब आना-जाना है।"

डाना चकित रह गयी।

"सच कह रहे हैं?"

"और सुनिएगा? चिड़ियों के लिए जो चना, फल, मांस, मछली आप लोग खरीद कर देते हैं, वह क्या चिड़ियों को दिया जाता है? कुछ नहीं देते, बेच देते हैं।"

"ऐसा?"

डाना का चेहरा तमतमा उठा। लगा, अपराध उसी का है। अमरबाबू उस पर भरोसा करके चिड़ियों को रख गये हैं, उसके लिए उचित था कि वह सामने खड़े रहकर चिड़ियों को खिलाती। मुन्शी इतना बड़ा चोर है? ऐसा तो वह सोच भी नहीं सकती थी। अच्छा-भला वेतन मिलता है उसे।

"धूप में बिना छाता लिए निकल पड़ी हैं आप, चेहरा लाल हो गया है। मेरा ही छाता ले लीजिए।"

"नहीं रहने दीजिए। धूप में चलने की मेरी आदत है।"

और कुछ कहे बिना डाना तेज कदमों से चल पड़ी। मल्लिक महाशय कुछ देर उसकी ओर देखते रहे, फिर सिर को झटकाया एक बार। चेहरे पर एक विचित्र मुस्कान खेल गयी उनके।

अध्याय- 3

एक लोलुप, क्षुधार्त बाघ के पिंजड़े में रक्त-रंजित, मेद-मण्डित मांस का एक बड़ा-सा टुकड़ा लटक रहा है और उस तक न पहुँच पाने के कारण बाघ निष्फल आक्रोश में पिंजड़े के लोहों पर अपना सिर पटक रहा है- ऐसी उपमा रूपचँद पर

लागू नहीं की जा सकती। यह सही था कि उनके मन में निष्फल आक्रोश की आग दहक रही थी, लेकिन डाना उनकी पहुँच से बाहर थी- यह सही नहीं। बस उनकी एकाधिक चालें व्यर्थ हो गयी थीं और इसे वे रग-रग में अनुभव कर रहे थे। पिंजड़े के लोहे पर सिर पटकने वाले आदमी वे नहीं थे। उनकी कल्पना में तो किसी पिंजड़े का अस्तित्व ही नहीं था। इस तरह के बे-सिर-पैर के रूपकों पर वे विश्वास ही नहीं करते थे।

वे कुछ निर्लिप्त होकर क्रेता रूपचँद की कृपणता का उपभोग कर रहे थे। ठीक-ठीक कितना दाम देने पर माल उनका हो जायेगा, यह वह बेचारा तय ही नहीं कर पा रहा था। बहुत दिनों पहले रूपचँद एक नीलामी में कुछ खरीदने गये थे। एक काश्मीरी शॉल बहुत पसन्द आ गयी उन्हें। पचास से शुरू होकर बोली डेढ़ सौ तक जा पहुँची। रूपचँद ने बोली लगाई- दो सौ, प्रतिद्वन्दी ने दो सौ दस की हाँक लगायी। रूपचँद के सिर पर जिद सवार हो गयी, हाँक लगायी- तीन सौ। प्रतिद्वन्दी ने फिर दस बढ़ाया- तीन सौ दस में वे ले ही लेते। रूपचँद ने पाँच सौ की बोली लगा दी। अब प्रतिद्वन्दी ने बढ़ने का साहस नहीं किया। रूपचँद ने शॉल खरीद ली। एकाएक इतने रुपये निकल जाने के कारण कुछ दिनों तक उन्हें आर्थिक तंगी भोगनी पड़ी थी, लेकिन मन में उनके कोई कष्ट नहीं था, वांछित वस्तु पा लेने का सुख ही मिला था उल्टे। उनकी कल्पना में डाना की भी नीलामी हो रही थी। ठीक कितने की बोली लगाने पर डाना उनकी हो जायेगी- यह वे तय नहीं कर पा रहे थे। प्रतिद्वन्दियों अमरेश और आनन्दमोहन ने कितने की बोलियाँ लगा रखी हैं- इसका भी अनुमान वे नहीं लगा पा रहे थे। यह जान लेने से उन्हें कुछ सुविधा होती।

एक बात और थी कि रूपचँद सिर्फ एक क्रेता नहीं थे। वे एक आर्टिस्ट भी थे। प्रिज्म से किसी भी वक्त इन्द्रधनुष देखा जा सकता है, इसलिए प्रिज्म के प्रति उनके मन में लोभ था। लोभ के साथ इन्द्रधनुष का सपना जुड़े होने के कारण लोभ की मात्रा तो बढ़ी ही थी, कुछ विशेषता भी ग्रहण कर लिया था लोभ ने। यह लोभ प्रिज्म के शीशे के प्रति नहीं, आकाशीय इन्द्रधनुष के प्रति था। ऐसा नहीं था कि नारी-मांस की बाजार में कोई कमी थी। प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी, तृतीय श्रेणी के बकरों के मांस जैसे बाजार में मिलते हैं, नारी-मांस भी वैसे उपलब्ध थे, लेकिन उनके प्रति रूपचँद में लोभ नहीं था। सुलभ होने के कारण नहीं, बल्कि उनके संस्पर्श में आने से मन में स्वप्न नहीं जागते, इसलिए। रूपचँद के लिए खिलौने-जैसे शीशे थे वे- कोई रंगीन, कोई सादा, कोई

पतला, कोई मोटा, लेकिन प्रिज्म की विशेषता किसी में नहीं। प्रकाश को वे इन्द्रधनुष में नहीं बदल सकते, जबकि डाना में यह विशेषता थी। उनकी नजर में डाना ठीक प्रिज्म नहीं, कीमती हीरे का टुकड़ा थी एक। जब भी डाना के सान्निध्य में आये थे, इसे अनुभव किया था उन्होंने। उसकी आँखों में दृष्टि ही नहीं, मदिरा भी थी; उसका रूप देह तक ही सीमित नहीं था, देहातीत परीलोक में भी ले जाने की शक्ति रखता था। उसके पास जाने से ही महसूस होता था- उम्र घट गयी हो, जिम्मेदारियों के बोझ से मन मुक्त हो गया हो, अब किसी के भी प्रति किसी बात की जवाबदेही न रह गयी हो।

मल्लिक के लिए इन्तजार कर रहे थे वे। आगे की कार्य-योजना की थोड़ी भूमिका गढ़ने के लिए ही उन्होंने मल्लिक को डाना के पास भेजा था। डाना के पास जाने का एक बहाना तो होना चाहिए! इसी बहाने की पटकथा तैयार करने के लिए मल्लिक को भेज रखा था उन्होंने। मल्लिक भी खुशी-खुशी राजी हो गये थे। डाना को, आनन्दबाबू को, जमीन्दार अमरेशबाबू और उनके चिड़ियाघर को बर्बाद करने तक शान्ति नहीं मिलने वाली थी उनको। उस औरत (अर्थात् अमरेशबाबू की गृहिणी रत्नप्रभा देवी) को दिखा देना होगा कि मल्लिक के बिना उनकी जमीन्दारी यहाँ चल ही नहीं सकती! रूपचँद अधीरता के साथ मल्लिक के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे।

एकाएक पास की झाड़ियों से बादामी-काली चिड़िया (महोका) पुकार उठी- 'गुप्-गुप् गुप्-गुप् गुप्-गुप् गुप्-गुप्।' कुछ सेकेण्ड बाद थोड़ी दूरी पर से उसकी संगिनी ने प्रत्युत्तर दिया- 'गुप्-गुप् गुप्-गुप् गुप्-गुप् गुप्-गुप्।'

अद्भुत लगा रूपचँद को।

अध्याय- 4

सारे दिन 'लू' चली थी। सन्ध्या हो गयी थी, लेकिन हवा का ताप कम नहीं हुआ था। घर के सामने वाले मैदान के बीच में एक छोटी कुर्सी निकाल कर डाना चुपचाप बैठी हुई थी। स्टीमर-यात्रा के दौरान इंजन के पास बैठने पर जैसा लगता था, वैसा ही अनुभव हो रहा था उसे। स्टीमर-यात्रा का ध्यान आने से बर्मा की बात याद आ गयी उसे। माँ, पिता, भाई की याद आयी। प्रोफेसर चौधरी की भी याद आयी। रिसर्च-स्कॉलर भास्कर बसु याद आये। अपने मन की ओर देखकर आश्चर्य हुआ डाना को। जो कभी उनके अत्यन्त अपने हुआ करते थे, अब उनकी याद शायद ही कभी आती है। जब आती है, तब भी वे बहुत अपने